मेवाड़ के कण-कण में धार्मिक भावना, श्रद्धा, सदुपदेश, समर्पण एवं बलिदान के स्वर मुखरित हो रहे हैं। लोक जीवन के निकटतम पारखी डा० भानावत द्वारा प्रस्तुत ये शब्द-चित्र मेवाड की धार्मिकता की अखण्ड प्रतिमा को अनावृत कर रहे हैं।

□ डॉ० महेन्द्र भानावत
[उपनिदेशक—भारतीय लोककला मंडल, उदयपुर]

# मेवाड़ की लोकसंस्कृति में धार्मिकता के स्वर

□

लोक संस्कृति की दृष्टि से मेबाड़ का अपना गौरवमय इतिहास रहा है, यहाँ के रण बाँकुरों ने जहाँ इसकी वीर संस्कृति को यशोमय बनाया वहाँ यहाँ की लोक संस्कृति भी सदैव समृद्ध और राग-रंग से रसपूरित रही है। जिस स्थान की संस्कृति अधिक पारम्परिक होती है वहाँ का जनमानस उतना ही अधिक धर्मप्रिय तथा आध्यात्मिक होता है, इसलिए उसका जीवन शाँत, गम्भीर तथा गहराई लिए होता है, उसमें उथला-छिछलापन उतना नहीं रहता। यही कारण है कि ऐसे लोगों में अधिक पारिवारिकता, भाईचारा, रिश्ते-नाते, सौहार्द सहकार तथा प्रेम सम्बन्ध की जड़े अधिक गहरी तथा घनिष्ट होती हैं, जन्म से लेकर मृत्यु पर्यंत तक समग्र जीवन राग-रंगों तथा आनन्द उल्लासों से ओत-प्रोत रहता है। परम्परा से पोषित एवं पल्लवित होने के कारण ऐसी संस्कृति में अपने जीवन के प्रति पूर्ण आस्था होती है इसलिए ऐसा मनुष्य अपने वर्तमान से प्रति पूर्ण आस्थावान रहते हुये अगले जन्म को भी सुखद, सुपथगामी बनाने के लिए कल्याणकर्म करने को उत्सुक रहता है। सुविधा की दृष्टि से यहाँ हम निम्नलिखित बिन्दुओं में इसका वर्गीकरण कर रहे हैं ताकि लोकसंस्कृति के व्यापक परिवेश में जो विविधता विधाएँ हैं उनका समग्र अध्ययन-चिंतन किया जा सके। ये बिन्दु है—

(क) व्रतोत्सवों तथा अनुष्ठानों में धार्मिकता के स्वर
(ख) लोकनृत्य नाट्यों में धार्मिकता के स्वर
(ग) मंडनों, गोदनों तथा विविध चित्रांकनों में धार्मिकता के स्वर
(घ) लोककथा, गाथा एवं भारत में धार्मिकता के स्वर
(च) धर्मस्थानों के लोकसाहित्य में धार्मिकता के स्वर

## (क) व्रतोत्सवों तथा अनुष्ठानों में धार्मिकता के स्वर

व्रतोत्सव तथा अनुष्ठान यहाँ के लोकजन के वे आधार हैं जिन पर उनके जन्म-जीवन की दृढ़ मित्तियाँ आश्रित हैं। इनकी शरण पकड़कर यह लोक अपने इस भव के साथ-साथ अगले भव—भव-भव को सर्व पापों से मुक्त निष्कलंकमय बनाता है इनका मूल स्वर मानव-जीवन को मोक्षगामी बनाने का होता है इसलिए प्रत्येक कर्म में वह मन-वचन-कर्म की ऐसी भूमिका निभाता है कि भले ही स्वयं को वह कष्टों में डाल दे पर उनके कारण कोई अन्य प्राणी दुःखी न हो अपने स्वयं के गृहस्थ-परिवार, पास-पड़ोस, गुवाड़-गाँव तथा समाज की सुख समृद्धि चाहता हुआ सम्पूर्ण विश्व को वह अपने कुटुम्ब-परिवार में देखता भालता हुआ सबका क्षेम-कुशल-कल्याण चाहता है, सारे के सारे व्रत, उत्सव और अनुष्ठान इन्हीं भावनाओं से भरे-पूरे हैं, व्यष्टि से प्रारम्भ हुआ यह मनोरथ समष्टि की और बढ़ता है और एकता में अनेकता को वरण करता हुआ अनेकता को एकता में ले चलता है।

चैत्र में शीतला सप्तमी को चेचक से बच्चों को बचाने के लिए शीतला माता की पूजा की जाती है। शीतला के रूप में चेचक के ही रंगाकार के पत्थर पूजे जाते है। चेचक का एक नाम इधर बोदरी भी है अतः शीतला माता को बोदरीमाता कहते हैं। छठ की रात को माता सम्बन्धी जो गीत गाये जाते हैं उनमें बालूड़ा की रक्षक माँ को प्रार्थना की

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

जाती है कि वह उसे बड़े यत्नपूर्वक खुशहाल रखे । यह शीतला किसी एक जाति की नहीं होकर सम्पूर्ण गांव की चेचक रक्षिका है । इस दिन प्रत्येक गाँव में शीतला को शीतलाया जाता है । इस दिन ठंडा खाया जाता है ।

गणगौर को जहाँ सधवाएँ अपने सुहाग के लिए पूजती हैं वहाँ बालिकाएँ श्रेष्ठ पति की प्राप्ति हेतु प्रति-दिन प्रातः होली के बाद से ही इसे पूजना प्रारम्भ कर देती हैं । गणगौर के व्रत के दिन दीवाल पर महिलाएँ थापे का जो अंकन करती हैं उसमें माता गणगौर तक पहुँचने की जो सिढ़ियाँ होती हैं उनको पारकर धर्मात्मा महिला ही उन तक पहुँच सकती है, इसलिए गणगौर के माध्यम से नारियाँ अपने धर्ममय जीवन को सरल, सादगीपूर्ण एवं संयमित करती हुई सुफलदायिनी होती हैं ।

श्रावण में छोटी तीज से लेकर बड़ी तीज तक मन्दिरों में झूलोत्सव की देव झाँकियों की छवि देखने प्रतिरात्रि को विशाल जनसमूह उमड़ पड़ता है । इन झूलों की अद्‌भुत छटा तथा धार्मिक दृश्यावलियाँ, भजन-कीर्तन तथा धर्म संगीत प्रत्येक जन-मन को धर्म-कर्म की ओर प्रेरित करता है, इसी श्रावण में शुक्ल पंचमी को जहरीले जीवों से मुक्त होने के लिए साँप की विविधाकृतियाँ बनाकर नागपंचमी का व्रतानुष्ठान किया जाता हैं, हमारे यहाँ सर्प पूजा का पौराणिक दृष्टि से भी बड़ा धार्मिक महत्त्व है । यों सर्प ही सर्वाधिक जहरीला जानवर समझा गया है इसलिए दीवालों पर ऐपन के नागों की पूजा तथा चाँदी के नागों का दान बड़ा महत्त्वकारी माना गया है ।

रक्षाबन्धन का महत्त्व जहाँ भाई-बहन का अगाढ़ स्नेह व्यक्त करता है वहाँ श्रवण के पाठों द्वारा उसकी मातृ-पितृभक्ति का आदर्श स्वीकारते हुये उसे आचरित करने की सीख प्राप्त की जाती है । श्रवण हमारी संस्कृति का एक आदर्शमान उदाहरण है श्रवण सम्बन्धी गीत-आख्यान निम्न से निम्न जातियों तक में बड़ी श्रद्धा-निष्ठा लिए प्रचलित हैं, नीमड़ी की पूजा का भी हमारे यहाँ स्वतन्त्र विधान है । बड़ी तीज को मिट्टी का कुड व तलाई बनाकर उसमें नीम-आक की डाल लगाई जाती है ये दोनो ही वृक्ष-पौध कडुवे हैं परन्तु अनेकानेक बीमारियों के लिए इनका उपयोग रामबाण है । नीमड़ी के व्रत के लिए सुहागिन का पति उसके पास होना आवश्यक है । इसे सौलह वर्ष बाद उझमाया जाता है ।

भाद्रकृष्णा एकादशी, ओगड़ा ग्यारस को माताएं अपने पुत्र से साड़ी का पल्ला पकड़ाकर गोबर के बने कुण्ड से रुपये नारियल से पानी निकालने का रास्ता बनाकर ओगड़ पूजती हैं इसी प्रकार वत्स द्वादशी, वछबारस को माताएँ अपने पुत्रों के तिलककर उन्हें एक-एक रुपया तथा नारियल देती हैं । माँ-बेटे के पावन पवित्र रिश्तेनाते के प्रतीक ये व्रत हमारी धर्मजीवी परम्परा के कितने बड़े संबल और सबक प्रेरित हैं ।

एकम से दशमी तक का समय विशेष धर्म-कर्म का रहता है । यह 'अगता' कहलाता है । इन दिनों औरतें खाँडने, पीसने, सींने, कातने तथा नहाने-धोने सम्बन्धी कोई कार्य नहीं कर दशामाता की भक्ति, पूजा-पाठ तथा व्रतकथाओं में ही व्यतीत करती हैं यह दशामाता गृहदशा की सूचक होती हैं, मेवाड़ में इसकी व्यापकता देखते ही बनती है मैंने ऊँच से ऊँच और नीच से नीच घरों में दशामाता को पूजते-प्रतिष्ठाते-थापते देखा है । इन दिनों जो कहानियाँ कही जाती हैं वे सब धार्मिकता से ओतप्रोत असत् पर सत् की विजय लिये होती हैं । सभी कहानियों में आदर्श-जीवन, घर-परिवार, स माज-संसार की मूर्त भावनाओं की मंगल-कामनायें संजोई हुई मिलती हैं । वर्षभर महिलाएँ दशामाता की बेल अपने गलों में धारणकर अपने को अवदशा से मुक्त मानती है ।

यहाँ का मानव अपने स्वयं के उद्धार-उत्थान के साथ-साथ अन्यों के कल्याण-मंगल का कामी रहा है, पशु-पक्षी तथा पेड़-पौधादि समस्त चराचर को वह अपना मानता रहा है इसलिए इन सबकी पूजा का विधान भी उसने स्वीकारा है । दशामाता की पूजा में वह पीपल पूजकर उसकी छाल को सोने की तरह मूल्यवान मानकर उसे अपनी कनिष्ठिका से खरोंचता हुआ बड़े यत्नपूर्वक रत्नों-जवाहरातों की तरह घर में सम्हाले रहता है । दीयाड़ी नम को हामा, नामा, खेजड़ी, बोबड़ी, आम, बड़ आदि वृक्षों की डालियाँ पूजकर मांगलिक होता है, यों इन वृक्षों को बड़ा ही पावन पूज्य माना गया है । देव-देवियों का इन पर निवास मानने के कारण इनकी पूजा कर वह अपने को नाना दर्द-दुखों से हल्का कर हर्षमग्न होता है ।

श्रावण कृष्णा द्वितीया को बालिकाएँ घल्या घालकर व्रत करती हैं, हरियाली अमावस्या के बाद आने वाले रविवार को भाई की फूली बहिनों द्वारा बाँधी जाती है । इस दिन व्रत किया जाता है और फूली की कथा कही जाती है ।

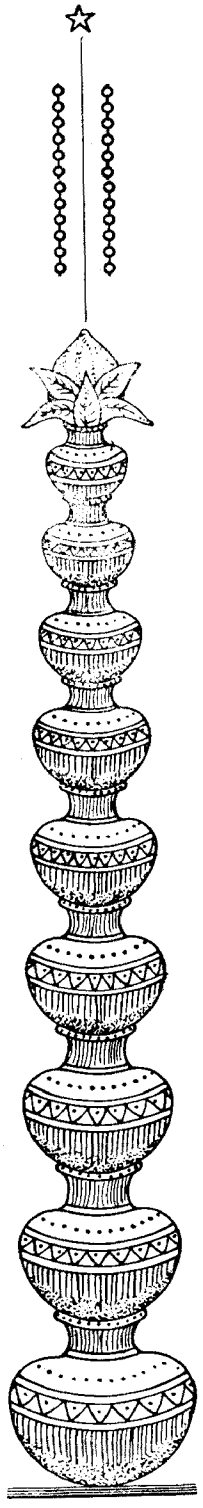

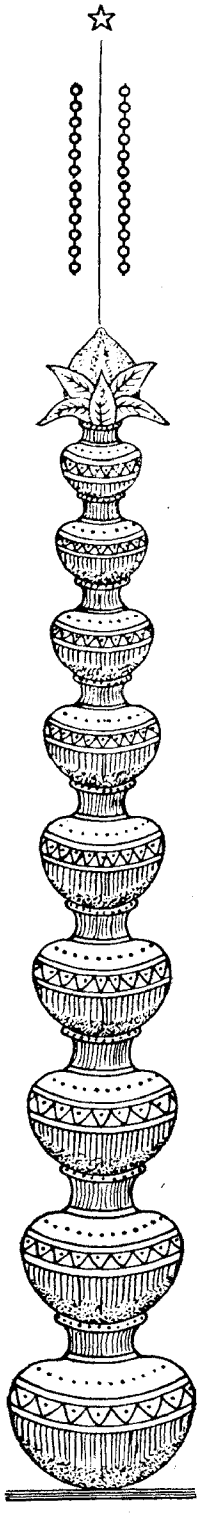

भाद्रशुक्ला चतुर्थी को गणेश जी के लड्डू तथा चौथमाता को पींडियाँ चढ़ाकर दीवाल पर सिन्दूर की चौथ मांड़ी जाती हैं। ओंकार अष्टमी को कुमारिकाएँ मनवांछित वर प्राप्ति हेतु नीर तथा ओंकार देव का व्रत रखती हैं। यह लगातार आठ वर्ष तक किया जाता है। इन्हीं दिनों श्राद्धपक्ष में बालिकाएँ पूरे पखवाड़े प्रतिदिन संध्या को गोबर की नाना भाँति की साँझी की परिकल्पनाएँ बनाकर उन्हें विविध फूलों से सजाती-सिंगारती हैं, प्रति संध्या को संझ्यामाता की आरती कर उनकी पूजा करती हैं और नाना प्रकार के संझ्या गीत गाती हैं। देवझुलणी एकादशी को प्रत्येक मन्दिर से देव जुलूस-रामरेवाड़ी निकाली जाती है। अनन्त चतुर्दशी को खीर-कजाकड़े बनाकर व्रत किया जाता है। कार्तिक कृष्णा चतुर्थी को करवाचौथ का व्रत कर गेरु का थापा बनाया जाता है। दीवाली के दूसरे दिन खेंकरे को गोबर के गोवर्द्धन जी बनाकर देहली पर उनकी पूजा की जाती है। आमला ग्यारस को इमली की पूजा, तुलसा ग्यारस को तुलसी की पूजा का विधान भी बड़ा मांगलिक माना गया है। तुलसा की पूजा के समय दालभात का जीमण, बैंकुठ का वास, सीताजी-सा चालचलावा और राम लछमण की खांद प्राप्त करने की वांछा की जाती है।

कार्तिक का पूरा महीना, क्या औरतें और क्या पुरुष, नहाते हैं। प्रातः उठते ही सरोवर अथवा नदी किनारे नहा-धोकर भक्ति-धार्मिक गीतों से सारा समुदाय भक्तिमय हो उठता है। प्रतिदिन कही जाने वाली कार्तिक कहानियाँ सद् आचरण, सद् विचार, सद् गृहस्थ और सद् जीवन-मरण के विविध घटना-प्रसंगों से पूरित होती हैं। ये सभी धार्मिक कहानियाँ देवी-देवताओं तथा उन महापुरुषों से सम्बन्धित होती हैं जो हमारे भारतीय सांस्कृतिक जीवन में एक आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित हैं। इन कहानियों के अतिरिक्त अनेक कहानियाँ उन साधारण से साधारण सामाजिक-पारिवारिक जीवन की घटनाओं को उच्चरित करती हैं जो हमारे प्रतिदिन के जीवन की मुख्य घटक के रूप में रहती हैं सास-बहू, पति-पत्नी, अड़ोस-पड़ोस, सगे-सम्बन्धी आदि को लेकर जो लड़ाई-झगड़े आये दिन छोटे-छोटे भारत खड़े करते हैं, उनके कुपरिणामों को लेकर उस नारकीय जीवन को कैसे सुखद वातावरण दिया जा सकता है, इसका प्रायोगिक परिणाम इनमें निहित रहता है ताकि प्रत्येक व्यक्ति अपना आत्म परीक्षण करता हुआ स्वयं अपने को खोजे और यदि कहीं गलत कुछ किया जा रहा हो तो उसे त्याग कर स्वयं सही मार्ग का अनुसरण करता हुआ अन्यों को सुपथ दिखाये और एक आदर्श जीवन जीये।

व्रत करना अपने आप में आत्म-संयम का सूचक है। आत्मा को संयमित करने वाला कभी भटकता नहीं, भूलता नहीं, वह स्वयं प्रकाशमान होता है और अन्यों को भी प्रकाशित करता है व्रत, कथाओं और थापों के चित्रांकनों से व्रतार्थी स्वयं अपने इष्टफल की प्राप्ति हुआ देखा जाता है ऐसा मन कभी भी उच्छृंखल और अलटप्पू नहीं हो सकता इन व्रतानुष्ठानों से चरित्र को बल मिलता है, आत्मा अनुशासित होती है, शरीर सरल, सौम्य और जीवन सात्विक और सदाचारी बनता है इनका असर सुगन्ध की तरह फैलता, फलता हुआ प्रत्येक मनुज को मानवीयता के उज्ज्वल पक्ष का साक्षात्कार देता है। धर्म, पुण्य, दया, करुणा, अहिंसा, सत्य जैसे भावों का प्रसारण ही इनका मुख्य ध्येय रहा है जो हमारी विराट् परम्पराओं के सुदृढ़ पायों की तरह गतिमान निश्चल हैं।

## (ख) लोकनृत्य नाट्यों में धार्मिकता के स्वर

धार्मिक त्यौहारों, अनुष्ठानों तथा अन्यान्य अवसरों पर नृत्यों, गीतनृत्यों, नाट्यों तथा नृत्य-नाट्यों का प्रदर्शन सामूहिक उल्लास तथा आराध्य के प्रति श्रद्धाभाव प्रगट करने के सुख-भाव रहे हैं माता शीतला की पूजाकर औरतें उसे रिझाने-प्रसन्न करने के लिए उसके सामने नृत्य करती है। माता गणगौर के सामने भी इसी प्रकार सरोवर के किनारे घूमर गीतों के साथ बड़े भावपूर्ण नृत्य करती हैं, आदिवासियों के सारे ही नृत्य धार्मिक अनुष्ठानों की पूर्ति में किये जाते हैं, भीलों का गवरी नाच अपने समग्र रूप में धार्मिक है। गाँव की खुशहाली, फसल की सुरक्षा तथा व्याधियों से मुक्त होने के लिए सारा भील गाव अपनी देवी गौरज्या की शरण जाकर गवरी लेने की भावना व्यक्त करता है। पूरे सवा महीने तक माता गौरज्या की मान-मनौती में भील लोग गवरी नाचते रहते हैं। इस बीच ये पूर्ण संयमी तथा सादगी का जीवन व्यतीत करते हैं एक समय भोजन करते हैं, हरी साग-सब्जी से परहेज रखते हैं, अरवाणे पाँव रहते हैं, पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करते हैं। नहाते-धोते नहीं हैं और न अपने घर ही जाते हैं। गवरी का सम्पूर्ण कथानक शिव-पार्वती

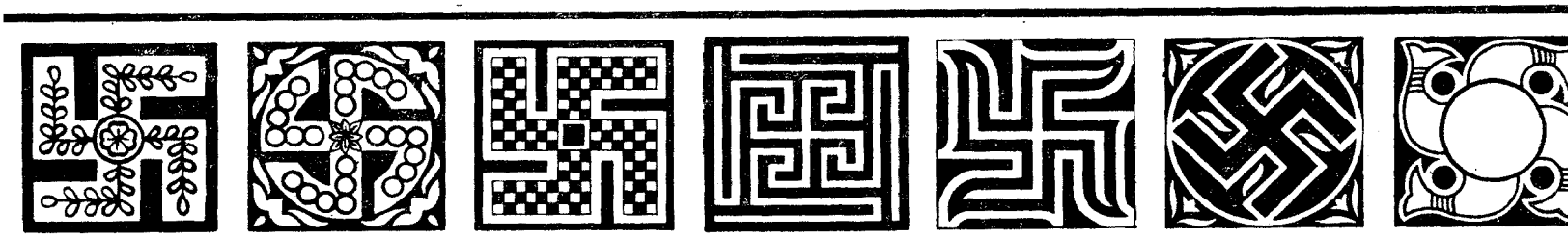

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

के उस पौराणिक धार्मिक आख्यान पर संघटित है जिसमें भस्मासुर अपनी तपस्या द्वारा शिवजी से भस्मी कड़ा प्राप्तकर शिवजी को ही भस्म करना चाहता है तब विष्णु मोहिनी का रूप धारण कर स्वयं भस्मासुर को ही भस्मीभूत कर देते हैं। गवरी का नायक बूड़िया इसी भस्मासुर और शिव का संयुक्त रूप है और दो राइयाँ शिवजी की दो पत्नियाँ शक्ति और पार्वती है। गवरी की यही कथा श्रीमद् भागवत के दशम स्कंध में भी थोड़े भिन्न रूप में देखने को मिलती है, गवरी के सारे पात्र शिवजी के गण के रूप में हैं। धार्मिकता से ओतप्रोत आदिवासियों का ऐसा नाट्यरूप विश्व में अन्यत्र कहीं देखने को नहीं मिलता।

उन्नसवीं शताब्दी में तुर्रा-कलंगी के रूप में शिव-शक्ति की प्रतीक एक मान्यधारा की लहर इधर बड़ी वेग रूप में चली। अलग-अलग स्थानों में इसके अखाड़े स्थापित हुए और इनके मानने वाले आपस में लोक छन्दों की विविध गायकियों एवं विषयों को लेकर प्रतिस्पर्धा की होड़ में अपने-अपने दंगलों में उतर आये। हार-जीत की इस भावना ने एक नई चेतना को उभारा। दोनों पक्ष पुराणों, उपनिषदों, वेद-वेदान्तों, कुरान की आयतों से अनेकानेक उदाहरण लेकर एक छन्द-विषय में शास्त्रार्थ पर अड़ जाते, घन्टों बहसबाजी होती, सवाल-जबाव होते और हार-जीत की होड़ा-होड़ी में कई दिन सप्ताह तक ये बैठकें चलती रहतीं, यही बैठकी दंगल आगे जाकर तुर्रा कलंगी के ख्यालों के रूप में परिणत हुआ। लावणीबाजी के ये ख्याल लोक जीवन में इतने लोकप्रिय हुये कि इन्हीं की लावणी-तर्जों पर अनेक धार्मिक ख्यालों की रचनाएँ होनी प्रारम्भ हुई। साधु-संतों ने भी इन लोक छन्दों-धुनों को अपना कर धार्मिक चरित्र-व्याख्यान लिखे जिनका वाचन-अध्ययन धर्मस्थानों में बड़ा प्रशंसित और असरकारी रहा। प्रसिद्ध वक्ता मुनि श्री चौथमलजी ने मात्र, ख्याल, काजलियों, धूंसो, जला, कांगसिया, तरकारी लेलो जैसी अति चर्चित-प्रतिष्ठित धुनों में हँस-वच्छ-चरित्र जैसी कृतियाँ लिखकर धार्मिकता के स्वरों को जो गहन-सौन्दर्य और जनास्था प्रदान की उसका असर आज भी यहाँ के जन-जीवन में गहराया हुआ है। इनकी देखादेख मुनि श्री नाथूलाल जी, रामलाल जी ने भी चन्द चरित्रादि लिखकर इस धार्मिक बेल को आगे बढ़ाने में भारी योग दिया।

गन्धर्व लोग धर्मस्थानों में अपने धार्मिक ख्यालों को प्रदर्शित कर धार्मिक संस्कारों को जमाने-जगाने का महत्त्वपूर्ण प्रयास करते हैं। पर्युषणों में जहाँ-जहाँ जैनियों की बस्ती होती हैं वहाँ इनका पड़ाव रहता है, जैनियों के अलावा ये कहीं नहीं जाते। ये लोग सात्विक तथा व्रत नियम के बड़े पक्के होते हैं। इनके ख्यालों में मुख्यतः श्रीपाल-मैना सुन्दरी, सुर-सुन्दरी, चन्दनबाला, सौमासती, अन्जना, सत्यवान-सावित्री, राजा हरिश्चन्द्र जैसे धार्मिक, शिक्षाप्रद ख्याल मुख्य हैं। इन ख्यालों के माध्यम से जन-जीवन में धार्मिक शिक्षण का व्यापक प्रचार-प्रसार होता देखा गया है।

रामलीला-रासलीलाओं के भी इधर कई शौकिया दल हैं जो अपने प्रदर्शनों से गाँवों की जनता में राम-कृष्ण का जीवन-सन्देश देकर स्वस्थ धर्मजीवन को जागृत करते हैं, आश्विन में त्रयोदशी से पूर्णिमा तक घो-सुडा में सनकादिकों की लीलाएँ प्रदर्शित की जाती हैं। कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा को बसी में गणेश, ब्रह्मा, कालिका, काला-गोरा तथा नृसिंहावतार की धार्मिक झाँकियाँ निकाली जाती हैं। नवरात्रा में रावल लोग देवी के सम्मुख खेड़ा नचाकर उसका स्वाँग प्रस्तुत करते हैं। भील लोग भी इसी प्रकार माता के सम्मुख कालका व हठिया का स्वाँग लाते हैं।

रासलीला की ही तरह रासधारी नामक ख्याल रूपों में भगवान राम का सीताहरण का दृश्य अभिनीत किया जाता है, इसे प्रारम्भ करने का श्रेय मेवाड़ के बरोड़िया गाँव के श्री मोतीलाल ब्राह्मण को हैं। यह अच्छा खिलाड़ी एवं ख्याल लेखक था। इसके रचे रामलीला, चन्द्रावल लीला, हरिश्चन्द्र लीला आदि ख्यालों की कभी बड़ी धूम थी।

## (ग) मांडनों, गोदनों तथा विविध चित्रांकनों में धार्मिकता के स्वर

हमारे यहाँ मांडनों, गोदनों तथा चित्रांकनों में अधिकतर रूप धार्मिक भावनाओं की अभिवृद्धि के द्योतक हैं, विवाह-शादियों तथा अन्य प्रसंगों पर घरों में लक्ष्मी, गणेश तथा कृष्णलीलाओं के विविध चित्रों में धार्मिक संस्कृति के दिव्य रूप देखने को मिलते हैं। दरवाजों पर फूलपत्तियाँ, बेलें, पक्षियों के अंकन तथा केल पत्तों के झाड़, शुभ शकुन के प्रतीक होते हैं, पेड़ों पिछवाइयों में भी यही भावना उभरी हुई मिलती है। पिछवाइयाँ वैष्णव मन्दिरों में भगवान की

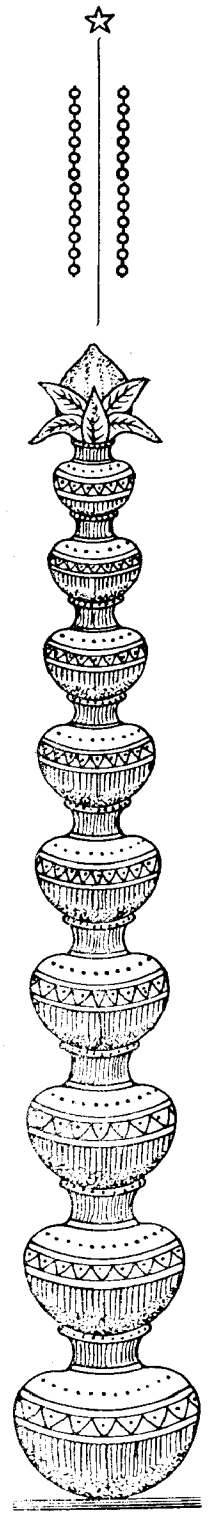

For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

मूर्ति के पीछे लगाई जाती हैं, इनमें कृष्ण जीवन की अनेक घटनाएँ चित्रित की हुई मिलती हैं। नाथद्वारा की पिछवाइयाँ विदेशों में बड़े शौक से खरीदी जाती हैं। पड़ों में पाबूजी, रामदला, कृष्णदला, देवनारायण, रामदेव तथा माताजी की पड़े बड़ी प्रख्यात हैं, इन पड़ों में चित्रित लोक देवता विषयक उदात्त चरित्रों की महिमा लोकजीवन की आदर्श थाती है। ये पड़ें चूंकि लोकजीवन में प्रतिष्ठित-पूजित देवताओं की जीवन-चित्रावलियां होती हैं इसलिए इनकी महत्ता साक्षात् देवतुल्य स्वीकारी हुई हैं, इसलिए किसी भी प्रकार का संकट आने पर लोग पड़ बंचवाने की बोलमा बोलते हैं और जब रोग-संकट से मुक्त हो जाते हैं तो बड़ी श्रद्धाभावना से इन पड़ों के ओपों को अपने गृह-आंगन में आमंत्रित कर रात-रात भर पड़ वाचन करवाते हैं।

विविध त्यौहारों तथा शुभ अवसरों पर गृह-आँगन के मांडनों में धार्मिक अभिव्यक्ति के अनेक उदाहरण देखने को मिलते हैं। गणगौर पर गोर का बेसण, दीवाली पर सोलह दीपक, हीड़ सातिया, गाय के खुर, कलकल पूजन पर कल-कल और पुष्कर की पेड़ी, ल्होड़ी दीवाली पर लक्ष्मी जी के पगल्ये, होली पर कलश कूंडे जैसे मांडनें और नवरात्रा पर पथवारी और माता शीतला सातमा पर माता शीतला एवं बालजन्म पर छठी के मांडनें हमारे सम्पूर्ण धर्मजीवी आचरणों की मांगलिक खुशहाली और अभिवृद्धि के पूरक रहे हैं। इनसे हमारा जीवन शुद्ध और आँगन पवित्र होता है ऐसे ही जीवन आँगन में देवताओं का प्रवेश माना गया है, इसलिए देव निमन्त्रण के ये मांडनें विशेष रूपक हैं। रात्रि में इनके जगमगाहट और भीनी सुगन्धी से देवदेवियों का पदार्पण होता है।

मेंहदी के मांडनें भी इसी तथ्य के द्योतक हैं, जवारा, मोरकलश, सुपारी, घेवर, बाजोट, तारापतासा, चाँद-तारा, चूंदड़ी आदि मांगलिक भावनाओं के प्रतीक हैं, जवारा खुशहाली के प्रतीक, सुपारी गणेश की प्रतीक, घेवर भोग के प्रतीक, बाजोट थाल रखने का प्रतीक, चाँदतारा, चूंदड़ी सुखी-सुहागी जीवन के प्रतीक हैं। गोदने भी सुहाग चिन्हों में से एक हैं। मरने पर शरीर के साथ कुछ नहीं जाता, विश्वास है कि गोदनें ही जाते हैं। इन गोदनों से अगला जन्म पवित्र बनता हैं इसलिए औरतें अपने हाथों, पाँवों, वक्षस्थल, पींडलियों, गाल, ललाट तथा समग्र शरीर पर तरह-तरह के गोदने गूदवाती हैं, इन गोदनों में विविध देवी-देवता, पक्षी, बेल-बूंटें, सातिया, बिंदी तथा आभूषण मुख्य हैं।

जैनचित्रों में धार्मिक शिक्षणपरक कई दृष्टान्त चित्रों की स्वस्थ परम्परा रही है, इनमें नारकीय जीवन की यातना परक चित्रों की बहुलता मिलती है ताकि उनको देखकर प्रत्येक व्यक्ति अपने जीवन को अच्छा बनाने का प्रयत्न करे और अच्छा फल और अच्छी गति प्राप्त करे। नरक जीवन के चित्रों में मुख्यतया पाप, अन्याय, अत्याचार, छल, कपट, ईर्ष्या, द्वेष, चोरी, कलह तथा अनैतिक कार्यों के फलस्वरूप भुगते जाने वाले कष्टों के चित्र कोरे हुए मिलते हैं। मनोरंजन के माध्यम से भी धार्मिक शिक्षण के बोध कराने के कई तरीके हमारे यहाँ प्रचलित रहे हैं, उनमें सांप-सीढ़ी का खेल लिया जा सकता है। इस खेल-चित्र में सांप-सीढ़ी के साथ-साथ विविध खानों के अलग-अलग नाम दिये मिलते हैं जो सुकर्म और कुकर्म के प्रतीक हैं, इनमें तपस्या, दयाभाव, परमार्थ, धर्म, उदारता, गंगास्नान, देवपूजा, शिव एवं माता-पिता भक्ति, ध्यान समाधि, गोदान तथा हरिभक्ति से चन्द्रलोक, सूर्यलोक, अमरापुर, तप, धर्म, ब्रह्म, शिव, गौ, इन्द्र, स्वर्ग धर्मलोक के साथ-साथ सीढ़ियों के माध्यम से बैकुण्ठ की प्राप्ति बताई गई है। दूसरी ओर झूठ, चोरी, बालहत्या-परनारी-गमन, विश्वासघात, मिथ्यावचन, गौहत्या, अधर्म आदि बुरे कर्मों के सर्प काटने से क्रोध-रौरवनरक, मोहजाल कुम्भी पाक नरक, पलीतयोनि, बालहत्या-तलातल, रसातल में पड़कर जघन्य कष्टों को सहना पड़ता है। सिढियाँ चढ़ना जीवन के उन्नयन और विकास का प्रतीक तथा सर्प काटने से नीचे उतरना हमारे दुर्दिन, दुर्गति तथा पतितावस्था का बोधक है। जैन पांडुलिपियों, ताड़पत्रों तथा मन्दिरों में दीवालों पर जो चित्र मिलते हैं उनमें नंदीश्वरद्वीप, अढाईद्वीप, लोकस्वरूप, तीर्थंकरों के जीवनाख्यान, विविध बरात, स्वप्न, उपसर्ग, समवसरण, आहार दान तथा कर्म सिद्धांत जैसे चित्र बहुलता लिए होते हैं।

### (घ) लोक-कथा, गाथा एवं भारत में धार्मिकता के स्वर

लोक देवी देवताओं तथा धार्मिक महापुरुषों से सम्बन्धित कथा, गाथाओं, पवाड़ों, ब्यावलों भजनों तथा भारतों का इस प्रदेश में बड़ा जोर रहा है। गाँवों में दिनभर कार्य व्यस्त रहने के पश्चात् रात्रि को जब मनोविनोद के

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

कोई साधन नहीं होते हैं तो समस्त जनता सामूहिक बैठक के रूप में नाना कथा-गाथाओं द्वारा आनन्द-रस प्राप्त करती है। इनमें लोक देवताओं तथा भक्तों सम्बन्धी कथाओं के वाचन कराये जाते हैं। भजनियों की संगत में रात-रात भर भजनों के दौर चलते रहते हैं। इन भजनों में मीरा, चन्द्रसखी, हरजी, कबीर, तोलादें आदि के भजन आध्यात्मिक भावनाओं की दृढ़भित्ति लिए होते हैं। लोक देवता तेजाजी की कथाओं को रात भर जनता बड़ी भक्तिनिष्ठा से सुनती है तेजाजी के अलावा रामदेवी जी, हरिश्चन्द्र रामलीला, कृष्णलीला, सत्यनारायण की कथा गाथाओं में जनता का सहज उमड़ता भक्तिभाव, कई अभावों, दुःखदर्दों को हल्का कर सुख और शांति की श्वांस लेता है इसी प्रकार पाबूजी के पवाड़े, रामदेवजी के ब्यावले तथा जागरण के गीतों में इन चमत्कारी पुरुषों के शौर्य-चरित तथा परमार्थ कार्यों से अपने क्षुद्र स्वार्थों को त्यागकर परमार्थ हित कल्याण के सबक सुनने को मिलते हैं। गाने सुनने वालों पर इनका बड़ा असर होता है जो जिन्दगी भर आदर्श बनकर नेक इन्सान की असलीयत को बनाये रखते हैं।

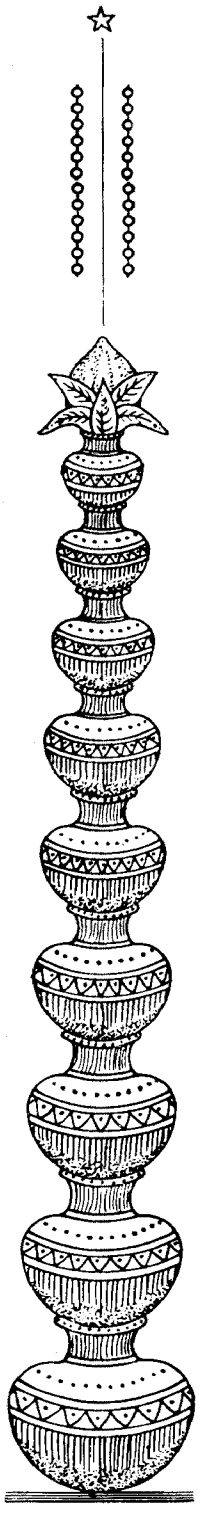

लोकदेवी देवताओं से सम्बन्धित गीत गाथाओं का तो कहना ही क्या जीवन के प्रत्येक संस्कार, वार-त्यौहार उत्सव, रोग, अनिष्ट की आशंका, भावी जीवन की खुशहाली, रक्षा-सुरक्षा, नौकरी, चाकरी, वाणिज्य-व्यापार, फसल आदि सैकड़ों प्रसंग हैं जिनमें पहले बाद में इन देवी-देवताओं की शरण लेनी पड़ती है। इन्हें रिझाने के लिए नाना प्रकार के गीत गाये जाते हैं। सर्प कटों को जब तेजाजी गोगाजी की बाँबी पर ले जाते हैं तो इन देवताओं के गाथा-भारत उच्चरित किये जाते हैं फलतः भोपे के शरीर में इनका आगमन होता है और जहर चूसकर उस व्यक्ति को चंगा कर दिया जाता है। लोक जीवन में इनके प्रति इतनी गूढ़ श्रद्धा-आस्था भक्ति रही है कि उनके लिए अन्य सारे साधन उपयोग निरर्थक से हैं।

नव रात्रा में इन देवताओं की पूरे नौ ही दिन चौकियाँ लगती हैं। अंखड दीप-धूप रहती है, भजनभाव भक्तिमय सारा वातावरण रहता है। इनकी पूजा-प्रतिष्ठा में सारा गाँव उमड़-पड़ता है। डेरू-ढाक-थाली के सहारे इनके यश-भारत रात-रात भर गाये जाते हैं, इन दिनों कोई गाँव ऐसा नहीं मिलेगा जहाँ इनका देवरा न गाजबाज उठता हो, रेबारी, राडारूपण, माताजी, चावंडा, लालांफूलां, भेंरू, कालका, रामदेव, नारसिंघी, मासीमां, वासक, पूरवज, देव नारायण ताखा, भूणामेंदू, आमज, हठिया, रतना, नाथू, रांगड्या, केशरिया जी, कौरव, पाँडव, मामादेव आदि कितने ही देव-देवियाँ हैं जो सम्पूर्ण लोक की रक्षा करते हैं, धर्मभावना, जगाते हैं और खुशहाली बाँटते हैं। इन सबके मारत, विधि विधान, मोपे और देवरे हैं अलग-अलग रूपों में इनकी पूजा के विधान हैं। गाँव का हर जन-मन इनका जाना-पहचाना होता है।

बिना प्रगटाये, प्रत्यक्ष हुए, ये देव अपराधियों को सजा देते हैं, चोरियों का पता लगाते हैं। वैद्य-हकीम बन हर प्रकार की मनुष्य-जानवरों की बीमारियाँ दूर करते हैं, आगे आने वाले समय का अता-पता देते हैं, प्राकृतिक प्रकोपों से जन-धन की रक्षा करते हैं। ये ही गाँव के संतरी, पुलिस, डाक्टर, अध्यापक, धर्मगुरु, ईश्वर तथा सद्गति देने वाले होते है।

## (च) धर्मस्थानों के लोक-साहित्य में धार्मिकता के स्वर

धर्मस्थानों का लोकसाहित्य अपने आप में बड़ा विविध, विपुल तथा व्यापक है। विविध सपनें, चौवीसियाँ, पखी गीत, साधु-साध्वी सम्बन्धी गीत-बधावे, विविध थोकड़े, गरभचिंतारणियाँ, मृत्युपूर्व सुनाये जाने वाले गीत, तपस्या गीत, विविध चौक, ढालें, तवन, भजन, कथाएँ, कहानियाँ, ब्यावले, बरात, सरवण तीर्थंकरों, गणधरों तथा सतियों सम्बन्धी गीत धार्मिक संस्कृति के कई रूप उद्घाटित करते हैं।

साधु साध्वियों का किसी गाँव में पदार्पण हर सबके लिए बड़ा आल्हादकारी होता है, इस उल्लास में जो गीत फूट पड़ते है उनसे लगता है कि जैसे सारे गाँव का ही भाग्योदय हुआ है, सोना रत्नों का सूर्य उदित हो आया है। साधुजी महाराज दीपित हुये से लग रहे हैं। साक्षात् में जैसे जिनवाणी सूर्य ही प्रगट हो आया है। यह सच भी है, साधु महाराज ही तो जैनियों के सर्वस्व हैं। इनका पधारना जैसे कुंकुम् केसर के पगल्यों का पदार्पण है।

कंकूरे पगल्ये मारासा पधारिया। केसर रे पगल्ये मारासा पधारिया ।।
ओरा गामां हीरा मोती निपजेजी, म्हांणे गामां रतनां री खान ।।
थोड़ी अरज घणी विनतीजी, लुललुल लागूंली पाँवजी ।।

स्थानक में पधारने पर जो बधावे गाये जाते हैं उनमें श्रावक-श्राविकाओं के जनम-जनम के भाग जग गये हैं और पूर्व जन्म के अन्तराय टूटते हुए नजर आते हैं। इस अवसर पर खुशियों का कोई पार नहीं, कंकू केसर घोटकर मोतियों के चौक पुराये जा रहे हैं। हृदय में इतनी उमंग कि समा नहीं रही है।

सैंया गावो ए बधावो हगेमगे, आज रो दीयाड़ो जी भलोई सूरज उगियो।
हरखे हिया में जी उमावो म्हारा अंग में करूँ म्हारा मारासा री सेवा ।।
दरसण पाऊँजी गुण आपरा, गाऊँजी परभवे बांध्याजी सामीजी अणी भवे।
आज टूटो छै अन्तराय उबर्‌या सैंया गावो ए बधावो .....

कर्म को लेकर जीवन की जड़े बहुत खंखेरी गई हैं 'जैसा कर्म वैसा फल' जैसे आचार को लेकर आचरण के भाँत-भाँत के मुरब्बे तथा खट्टी-मीठी चटनियों के स्वाद हमारा यह जीव चखता रहता है। विषय वासना के वासंतीकुन्ज इसे इतर-फुलेल की फुनगियाँ दे-देकर बावला किये रहते हैं। कर्मों का जाल-जंजाल बड़ा ही विचित्र और वैविध्य लिए है अपने-अपने कर्म और अपने-अपने धर्म ही तो अन्ततोगत्वा मानव की मूल पूँजी बनते हैं कर्मों की इस दार्शनिकता के कई चौक धर्म-स्थानों की शोभा बने हुए हैं जिनमें जीव को बुरे कार्य तजकर सदैव अच्छे कार्य की ओर प्रवृत्त करने को बाध्य किया जाता है। कर्म चौक की एक छटा द्रष्टव्य है—

'करम नचावे ज्यूं ही नाचे, ऊँचा होवण ने सब करता।
नीचा होवण ने कोई ना राजी नन्द्या विरथा क्यूं करता।
मोय चाख मोटो मद पीवै ओगण पारका थूं क्यूं गिणै थारा, ओगण थने नहीं दीसै,
अनेक ओगण है मारे रे आतमा ग्यानी वचन पकड़ो रास्ता।'

थोकड़ों के निराले ठाठों में आत्मनिन्दा एवं आत्मभर्त्सना के साथ-साथ सांसारिक मोहमाया, रागद्वेष, मान-अपमान आदि को तिलांजलि दे जीव के सद्‌कार्य की ओर लगाया जाता है। मरणासन्न व्यक्ति को मृत्यु से पूर्व भी ये थोकड़े सुनाये जाते हैं। इन थोकड़ों में जीवन के श्यामपक्ष को ही अधिक वर्णित किया गया है आत्मालोचन के रूप में जहाँ एक ओर इन थोकड़ों ने आत्म-निन्दा भर्त्सना की अमानवीय वृत्तियों का पर्दाफाश किया वहाँ जरजरे जीवन को झकझोरते हुये बीते जीवन की कारगुजारियों का लेखा-जोखा कर उसका प्रायश्चित्त करते हुए जीव को आस्थावान-आशावान बनाया है। सुपारी, पाँचबटाऊ तथा आत्मनिन्दा के थोकड़ों में इस भावना की गहराई देखने को मिलती है। उदाहरण के लिए आत्मनिन्दा के थोकड़े का यह अंश लिया जा सकता है।

'आठ करमां री एकसो ने अड़तालीस प्रकृति ऊठेसण थानक थारा जीव दोरा लागरया छे रे बापड़ा सीलवरत, गांजो, भांग, तमाखु, दाखरो तजारो हरी लीलोती रा सोगन लेइने भांगसी तो थारा जीवरी गरज कठासूं सरसी रे बापड़ा थारी जड़ कतरीक छेरे बापड़ा, म्हारा म्हारा करीरयोछै म्हारा माता, म्हारा पिता, म्हारा सगा, म्हारा सोई, म्हारा न्याती, म्हारा गोती, म्हारा भाई, म्हारा बन्धव, म्हारा भरतार, म्हारा पुतर, म्हारा दास, म्हारा दासी, म्हारी हाट, म्हारी हवेली, म्हारा-म्हारा करीयो छै थारा कूण छे ने थूँ कंडो छेरे बापड़ा ?'

नाना जीव-योनियों में भटकते-भटकते जीव जब मानवीय गर्भ धारण करता है, तब एक ओर तो यह लगता हैं कि जीव ने सर्वश्रेष्ठ योनि धारण की है परन्तु दूसरी ओर गर्भावास में उसे जो यातनाएँ सहनी पड़ती हैं उससे यह उद्‌भासित होता है कि जीव जन्म ही न ले तो अच्छा। गर्भचिंतारणियों में गर्भस्थ शिशु की चिंतना के साथ-साथ मानवीय जीवन को सम्यक् दृष्टि से समतावान बनाने की सीख भी मिलती है। आठ कर्मों की कालिख से बचते हुए पांच महाव्रत धारणकर जीवन को सार्थक बनाने की कला इन चिंतारणियों में देखने को मिलती है।

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

गर्भवती औरतों को इन्हें सुनाने के पीछे यही मूल भावना रही है कि गर्भ में ही शिशु जीवयोनि का इतिहास, कर्मफल सिद्धान्त, राग-द्वेष, मोह-माया, ईर्ष्या-अंह, पाप-पुण्य, रोग-भोग, समता-संयम आदि को जानता हुआ देह धारण करने के बाद अपने जीवन को मानवीय उच्चादर्शों की कसौटी पर कसता हुआ अपना भव सफल सार्थक करे।

एक नमूना देखिये—

'रतनां रा प्याला ने सोना री थाल, मूंग मिठाई ने चावल-दाल, भोजन भल-भल भांतरा।
गंगाजल पाणी दीधो रे ठार, वस्तु मँगावो ने तुरत त्यार, कमी ए नहीं किणी वातरी।
बड़ा-बड़ा होता जी राणा ने राव, सेठ सेनापति ने उमराव, खातर में नहीं राखता, जी
नर भोगता सुख भरपूर, देखतां-देखतां होइग्या धूर, देखो रे गत संसार री।
करे गरव जसी होसी जी वास, देखतां देखतां गया रे विनास, थूं चेते उचेते तो मानवी।'

'संयम ग्यान बतावेगा संत, आली एनाद में रहियो अनन्त, भव-भव मांय थूं भटकियो।
नव-नव घाटी उलांगी आय, दुख भव भय नवरो रे पाय, ऊँच नीच घर उपन्यो।
सूतरमें घणी चाली छे बात, यो थारो बाप ने या थारी मांत, मो माया मांय फंसरयो।
मांडी मेली घणी सुकी ने बात, धारो रे धारो दया ध्रम सार थूं चेते उचेते तो मानवी।'

सपनों में विशेष रूप से तीर्थंकरों से सम्बन्धित गीत मिलते हैं। व्याह-शादियों में चाक नूतने से लेकर शादी होने के दिन तक प्रतिदिन प्रातःकाल ये सपने गाये जाते हैं, परन्तु पर्यूषण के दिनों में ये विशेष रूप से गाये जाते हैं इनमें तीर्थंकरों के बाल्यजीवन के कई सुन्दर सजीव चित्र मिलते हैं। इन सपनों के अन्त में इनके गाने का फल बैकुँठ की प्राप्ति तथा नहीं गानेवालियों को अजगर का अवतार होना बतलाया गया है। यही नहीं सपने गाने वाली को सुहाग का फल तथा जोड़ने वाली को झूलता-फलता पुत्र प्राप्त होने जैसे माँगलिक भावनाएँ पिरोई हुई सुनी जाती हैं यथा—

जो रे महावीर रो सपनो जो गावे ज्यांरो बैकुण्ठ वासो जी
नहीं रे गावे नी सामे ज्यांरो अजगर रो अवतारोजी
म्हैं रे गावां जी सांभलांजी म्हारो बैकुठवासो जी
गावां वाली ने चूड़ो चूँदड़ जोड़णवाली ने झोलण पूतोजी।

सपनों के अतिरिक्त विवाह पर सिलोके बोलने की प्रथा रही है, पहले ये सिलोके वर द्वारा बोले जाते थे परन्तु अब जानी लोग बोलते हैं जब जानी-मानी एक स्थान पर एकत्र होते हैं। इन सिलोकों में मुख्यतः ऋषभदेव, पार्श्वनाथ, नेमिनाथ, शांतिनाथ, महावीर स्वामी के सिलोके अधिक प्रचलित हैं, केशरियाजी, बालाजी, गणपति, सीता रामलखन, कृष्ण, सूरजदेव, रामदेव के सिलोके भी सुनने को मिलते हैं। इन सिलोकों के साथ-साथ ढालों का भी हमारे यहाँ बड़ा प्रचलन रहा है। इन ढालों की राग लय बड़ी ही मधुर और अपनी विशेष गायकी लिए होती है। इन ढालों में रावण की ढाल, गजसुकुमार की ढाल, गेंद राजा की ढाल बड़ी लोकप्रिय है।

जीवन में बुढ़ापा अच्छा नहीं समझा गया जीवन का यह एक ऐसा रूप है जब इन्द्रियाँ शिथिल हो जाती हैं और आदमी पराये पर आश्रित हो जाता है, तब वह अपने को कोसता है, बुढ़ापा विषयक गीतों में बुढ़ापे को वैरी बताकर उससे जल्दी से जल्दी छुटकारा प्राप्त करने की भावनाएँ पाई जाती हैं। जीवन से मुक्त होना मृत्यु है। यह एक अत्यन्त ही रोमांचकारी, कारुणिक तथा वियोगजन्य-प्रसंग है। मरने के बाद जो बधावे गाये जाते हैं उनमें आत्मा का परमात्मा से मिलन होना और जीवन की असारता के संकेत मिलते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि मेवाड़ की सम्पूर्ण लोकसंस्कृति धर्म और अध्यात्म की ऐसी दृढ़ भित्तियों पर खड़ी हुई है जहाँ मनुष्य का प्रत्येक संस्कार धार्मिकता के सान्निध्य में सम्पूर्ण होता हुआ मृत्यु का अमरत्व प्राप्त करता है। इस प्रदेश में यदि लोक धर्म की बुनियाद इतनी गहरी, परम्परा पोषित नहीं होती तो यहाँ का जीवन संयम, धर्म और अध्यात्म का इतना उदात्त रूप नहीं देता।

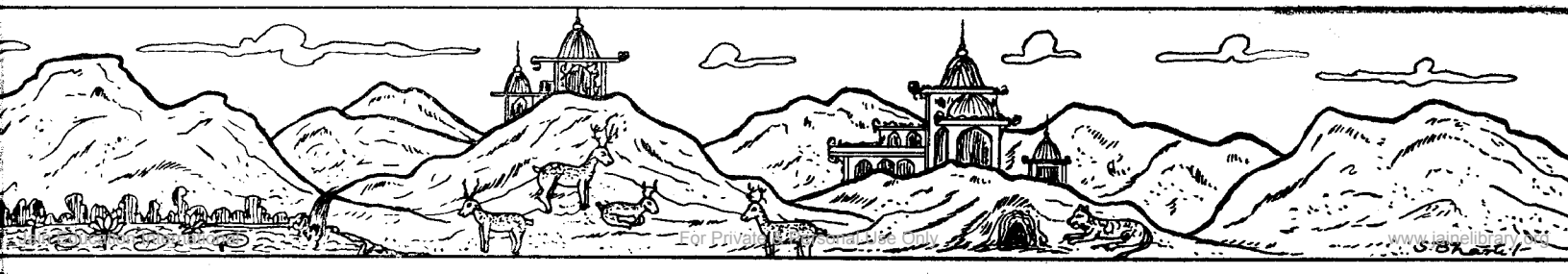

For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org